Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

वेदों में शान्ति की अवधारणा महर्षि दयानन्द के परिप्रेक्ष्य में

चन्द्र शेखर (शोधच्छात्र)
संस्कृत विभाग, जा.मि.इ., नई दिल्ली-25
ई-मेल: shekharkv2@gmail.com

प्रस्तावना -

'शमु उपसमे' धातु से 'इन' प्रत्यय लगने पर शान्ति पद सिद्ध होता है। जिसका अर्थ है- मानसिक सुख, निरोग, सन्ताप से निवृत्ति एवं भद्र आदि। वेद के शान्ति करण पाठ में प्रार्थना है, कि ब्रह्माण्ड के समस्त पदार्थ अथवा दिव्य शक्तियां हमारे और अन्य सभी के लिए शुभकारी हों, यही शान्ति है। शान्ति सामाजिक, धार्मिक, प्राकृतिक तत्वों में सन्तुलन विशेष है। 19 वीं शताब्दी में कुछ ऐसे गणमान्य व्यक्तियों ने भारत में जन्म लिया जोकि युग द्रष्टा एवं समाज सुधारक रहे हैं, जिनमें से महर्षि दयानन्द सरस्वती एक हैं। जिन्होंने अपने जीवन के समस्त भौतिक सुखों को छोड़कर वैदिक ज्ञान की भानु परछाई और काली घटाओं के तुल्य मिथ्या ज्ञान की मेघमाला को ज्ञान मित्र के तीखे बाणों से सर्वथा छिन्न-भिन्न करने का प्रयत्न किया। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों को अपना आदर्श-ग्रन्थ माना है और महर्षि मनु व योगेश्वर श्रीकृष्ण को अपने उपदेशों एवं पुस्तकों में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिस ज्ञान को अपनी पुस्तकों में प्रकाशित किया है उसका आधार वेद है। महर्षि की पुस्तकों का सत्य ज्ञान प्राप्त करने में अतिशय महत्व है ठीक वैसे ही जैसे उनकी वाग्मिता तथा विद्वत्ता युक्त उपदेशों का महत्व है। उनके उपदेशों में जहां ईश्वर, मोक्ष, धर्म, भक्ति, वेद, यज्ञ, शान्ति, सत्य स्वरूप, पुनर्जन्म, वर्णाश्रम धर्म और संस्कारों का विशेष प्रतिपादन पूर्वक प्रमाणित किया गया है। जिसे आधार मानकर मेरे इस शोध पत्र का विषय 'वेदों में शान्ति की अवधारणा महर्षि दयानन्द के परिप्रेक्ष्य में' निर्धारित है। दयानन्द जी के उपदेश संग्रह एवं उनकी पुस्तकों में शान्ति का स्वरूप हमें दो रूपों में देखने को मिलता है, एक तो व्यक्तिगत शान्ति दूसरा राष्ट्रीय शान्ति। जब हम व्यक्तिगत शान्ति की चर्चा करते हैं तो शान्ति का अर्थ हम तीन प्रकार के दुखों के नाश से लेंगे जैसे सांख्य में आदिभौतिक, अध्यात्मिक और आदिदेविक इन तीनों प्रकार के दुखों का नाश ही मोक्ष है।[1] जिससे निवृत्ति को भारतीय दार्शनिक मतों में विभिन्न विधियों से जाना है। जब हम शान्ति की अवधारणा राष्ट्रीय शान्ति के रूप में देंगे तो यह अनुशासन के रूप में देखी जाएगी। राष्ट्र में किस प्रकार अनुशासन स्थापित हो अर्थात समाज के नियमों या कानूनों का पालन करें, जिससे कि शान्ति स्थापित रहे। इस शोधपत्र में शान्ति के इन दोनों पक्षों को महर्षि दयानन्द के मतानुसार वेदों को आधार ग्रन्थ मानकर विवेचित् करेंगे।

[1] सांख्यकारिका

वेद एवं शान्ति परिचय -

महर्षि दयानन्द सरस्वती का मानना है कि वेद अपौरूषेय है। वेद अर्थात् ज्ञान, वेद अर्थात् विद्या, ज्ञान या विद्या यह संपूर्ण सृष्टि पदार्थों के बीच उत्तम है। ज्ञान सुख का कारण है और ज्ञान के बिना सुख कारक पदार्थ भी दुख कारक होता है, क्योंकि ज्ञान के बिना पदार्थ की योग्य योजना करते नहीं बनती। अन्ततः ज्ञान ईश्वर का ही रूप है| अनन्त यह उसकी संज्ञा है। परमेश्वर मनुष्य को विद्या का प्रकाश करता है सो वही प्रकाश वेद है। मनुष्य इस अनन्त ज्ञान का अर्थ योग्य अधिकारी है किन्तु इस ज्ञान की उत्पत्ति मनुष्य से नहीं है। दयानन्द जी के मत से प्रभावित लोगों के समूह को उन्होंने आर्य समाज नामक एक सूत्र में बांधा है। आर्य समाज के लिए बनाए १० नियमों में दयानन्द जी ने सर्वाधिक महत्व वेद को देते हुए प्रथम नियम में कहा है कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सभी आर्यों का परम धर्म है।[2]' इसी नियम से स्पष्ट होता है कि दयानन्द जी वेदों के प्रति कितने निष्ठावान हैं। उन्होंने इस समाज के ध्येय वाक्य से स्पष्ट कर दिया है, कि शान्ति केवल सहन करना मात्र नहीं है अपितु दुष्टों का यथा योग्य प्रतिकार अनिवार्य है यह मन्त्र वेद का सन्देश भी है– **इन्द्रं वर्धन्तो असुर: कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्ण:॥**[3] आधुनिक काल में शान्ति का अर्थ अहिंसा को लिया जाता है किंतु वेद एवं दयानन्द सरस्वती जी की मान्यता केवल अहिंसा शान्ति नहीं है या व्यापक अर्थ में यूं कहें शान्ति भद्र का पर्याय है, न कि अहिंसा का। अहिंसा शान्ति का एक पक्ष मात्र है। तभी तो वेद में कहा है–

ॐ द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षँ शान्ति:, पृथ्वी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्ति:।

वनस्पतय: शान्तिर्विश्वे देवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति:, सर्वँ शान्ति:, शान्तिरेव शान्ति:।

सा मा शान्तिरेधि॥ ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:॥[4]

हे प्रभु आपकी कृपा से हमारे लिए द्युलोक सुख शान्ति कारक हो, पृथ्वी सुख शान्ति कारी होवे, जल सुख शान्ति कारी होवे, औषधियां सुख शान्ति कारी हो, वनस्पतियां वृक्ष-पौधे आदि सुख शान्ति कारी हो, सब दिव्य शक्ति युक्त पदार्थ अथवा सब विद्वान् सुख शान्ति कारी होवें, वेद ज्ञान सुख शान्ति कारी हो, जगत् के शब्द जड़ चेतन पदार्थ सुख शान्ति करी हो, जीवन में शान्ति ही शान्ति प्राप्त हो और वह प्राप्त शान्ति बढ़ती ही रहे[5] अर्थात संसार और जीवन में सर्वत्र शान्तिमय वातावरण हो और वह निशदिन बढ़ता रहे। इस प्रकार वेद के इस मंत्र से शान्ति को स्पष्ट किया गया है, जिसका केवल सार सांसारिक हिंसा से मुक्ति ही शान्ति नहीं है अपितु सभी जड़ चेतन जो जो पदार्थ मनुष्य से संबंधित हैं मनुष्य से किसी न किसी रूप में जुड़े हुए हैं उन सब से मनुष्य का कल्याण होना ही शान्ति है। भद्र की कामना इस मंत्र के अंदर की गई है। वेद का यह मंत्र स्पष्ट संदेश देता है कि मनुष्य शान्ति प्रिय प्राणी है और वह हमेशा शान्ति की खोज में प्रयासरत रहता है। अतः यहां पर परमेश्वर से शान्ति की कामना की गई है, इसी शान्ति के प्रसंग में वेद में कहा है-

[2] सत्यार्थप्रकाश

[3] ऋग्वेद ९-६३-५

[4] ऋग्वेद ९.६३.५

[5] दैनिक नित्यकर्म विधि

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरू। शं नः कुरू प्रजायोऽभयं नः पशुभयः।।[6]

इस मन्त्र का पदार्थ सहित भावार्थ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में महर्षि लिखते हैं पदार्थ आर्याभिविनय पुस्तक से लिया है। (यतः+यतः) जिस-जिस देश से (समीहसे) समयक् चेष्टा करते हो (ततः) उस-उस देश से (नः) हम को (अभयम्) भय रहित (कुरू) करो (शम्) सुख (नः) हमको (कुरू) करो (प्रजायः) प्रजा से (अभयम्) भय रहित (नः) हमको (पशुयः) पशुओं से।[7] भावार्थ विस्तार से यह है- हे परमेश्वर! आप जिस-जिस देश से जगत् के रचना और पालन के अर्थ चेष्टा करते हैं, उस-उस देश से हमको भय से रहित करिए, अर्थात् किसी देश (स्थान) से हमको किञ्चित् भी भय न हो, वैसे ही सब दिशाओं में जो आपकी प्रजा और पशु हैं, उनसे भी हमको भयरहित करें तथा हमसे उनको सुख हो, और उनको भी हम से भय न हो तथा आपकी प्रजा में जो मनुष्य और पशुआदि हैं, उन सबसे जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष पदार्थ हैं, उनको आपके अनुग्रह से हमलोग शीघ्र प्राप्त हों, जिससे मनुष्य जन्म के धर्मादि जो फल हैं, वे सुख से सिद्ध हों।[8] इस प्रकार शान्ति के व्यापक अर्थ को वेद में स्पष्ट प्रतिपादित किया है जो दयानन्द जी के विचारों से परिलक्षित होता है।

राष्ट्रीय भावना एवं शान्ति-

आचार्य चाणक्य ने कहा है कि यदि व्यक्ति राष्ट्रवाद से शून्य है, तो यह शिक्षक की असफलता है। व्यक्ति तो क्या देश की धरती का कण-कण राष्ट्र भक्ति की भावना से युक्त होना चाहिये यही शिक्षक की सफलता है। सचमुच राष्ट्र का निर्माता शिक्षक ही होता है वह कभी साधारण नहीं होता। शिक्षक की शिक्षा ही आदर्श नागरिकों का निर्माण करती है। अथर्ववेद में एक मन्त्र आया है जिसमें-

भद्रमिच्छन्त: ऋषय: स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्टं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु।।[9]

राष्ट्रीय भावना में वेद कहता है, आरंभ में राष्ट्र का भाव नहीं था किंतु कालांतर में यह भाव विकसित हुआ। मनुष्य अपने-अपने कर्तव्य को समझते थे अतः वे अनाधिकार चेष्टा नहीं करते थे। अतः उस समय हम एक राष्ट्र के हैं ऐसा भाव जागृत ही नहीं हो सकता था। धीरे-धीरे जब मनुष्य की निकृष्ट प्रकृति ने उनकी उत्तम प्रकृति को दबा दिया और मनुष्य लोग स्वार्थ वश होकर अनाधिकार चेष्टा करने लगे तब एक संगठन की आवश्यकता हुई, जिससे कि वे शत्रुओं से अपनी रक्षा कर सके तब राष्ट्र भाव की जागृति हुई। आरंभिक मनुष्य सृष्टि मूर्ख थी ऐसा नहीं है, अतः उसमें राष्ट्र भाव पैदा होना संभव है। संसार ने धीरे-धीरे जब उन्हें यह अनुभव दिया कि अपनी रक्षा के लिए एक संघ की आवश्यकता है, तब

[6] यजुर्वेद ३६.२२

[7] आर्याभिविनय

[8] ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका ई.प्रा.वि.

[9] अथर्ववेद १९.४१.१

क्रमानुसार राष्ट्र भाव का उद्भव हुआ वेद को कौनसी कल्पना अभिमत है यह विचारणीय है। वेदों के स्वाध्याय से प्रतीत यही होता है कि वेदों में राष्ट्र भाव की उत्पत्ति पीछे से हुई है। इस मंत्र में स्पष्ट कहा है कि राष्ट्र पैदा किया जाता है, यह कोई नित्य वस्तु नहीं है। उसी जमीन और उन्हीं मनुष्यों के होते हुए भी एक समय में उस मनुष्य समुदाय को हम राष्ट्र कह सकते हैं और एक समय में नहीं कह सकते। जमीन राष्ट्र नहीं, मनुष्यों का जत्था राष्ट्र नहीं, एक जाति के मनुष्य राष्ट्र नहीं अपितु राष्ट्र एक और ही वस्तु है और इन मनुष्यों में पैदा की जा सकती है। उस वस्तु के होते हुए उसी जमीन पर रहने वाला वही मनुष्यों का जत्था राष्ट्र कहलाने योग्य हो जाएगा। अत: शान्ति के लिये दुष्टों का प्रतिकार आवश्यक है इसलिये राष्ट्र की कल्पना हुई है। वेद, गीता और दयानन्द जी मनुष्य को कर्म करने में स्वतन्त्र मानते हैं। जिस प्रकार राष्ट्र की उत्पत्ति की कल्पना है उसी प्रकार उस राष्ट्र की शान्ति की कल्पना शान्ति की कामना वेद में की गई है। राष्ट्रीय प्रार्थना के माध्यम से कहा है-

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढ़ाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥[10]

उपरोक्त मंत्र के अंदर शान्ति की कामना करते हुए कहा गया है कि यह जो हमारा राष्ट्र है वह द्विज अर्थात् विद्वान् तेजस्वी लोगों से युक्त हो, यहां के शूरवीर क्षत्रिय ऐसे हो जो शत्रु दल का तथा समाज के अंदर असामाजिक तत्व है उनके विनाशक हों, यहां के पशु पक्षी आदि हमारे लिए हितकर हों, इस राष्ट्र की आधार नारीशक्ति हो, जितने भी वीर पुरुष हैं वे सभी सशक्त हों, यहां पर पर्याप्त मात्रा में वर्षा आदि हों, हमारी धरती फल फूलों से लदी हो, हमारी स्वाधीनता हमेशा बनी रहे इस तरह वेद के अंदर राष्ट्रीय शान्ति की कामना की गई है। इसी शान्ति को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने उपदेशों एवं लिखो में व्यक्त किया है। शान्ति के प्रसंग में जिस प्रकार शत्रु के विनाश के चर्चा आती है उसमें हिंसा रहित कार्यों का वर्णन है अर्थात् दूरदर्शिता देखते हुए वें व्यक्ति जो समाज के विरुद्ध आचरण करते हैं या धर्म विरुद्ध आचरण करते हैं उनका शमन् अत्यावश्यक है। जिस प्रकार राष्ट्र की उत्पत्ति की कल्पना है उसी प्रकार उस राष्ट्र की शान्ति की कल्पना शान्ति की कामना वेद में की गई है। जिस प्रकार असामाजिक तत्वों के विनाश का वर्णन किया गया है ठीक उसी प्रकार वेद में सहनशीलता को भी पूरा महत्व दिया गया है। वेद में अथर्ववेद में कहा है-

हे प्रभु! मैं सहन करने वाला हूं। इस भूमि पर उत्कृष्टतर प्रसिद्ध हूं। मैं मुकाबले में आये हुए को सहने वाला हूं। प्रत्येक दिशा में प्रत्येक इच्छापूर्ति के लिये सब कुछ विशेषतया बार-बार सहने वाला ही होऊं। अर्थात् मनुष्य जब सभा समिति में जावे तब वह उस उपर्युक्त मन्त्र का जप करें सभा समिति में सहनशीलता रूप गुण की बड़ी आवश्यकता है। अपने पर की गई आलोचना को धैर्य पूर्वक् सुन लेना तथा दूसरे की समालोचना धैर्य पूर्वक् करना यह गुण प्रत्येक सभासद में होना चाहिए और मनुष्य में यह गुण तब तक नहीं आ सकता जब तक मनुष्य में सहनशीलता नहीं है। अतः सहनशीलता की बड़ी आवश्यकता है जिस प्रकार वीरता एक आभूषण है उसी प्रकार सहनशीलता भी मनुष्य का एक आभूषण है। वेद में हिंसा अहिंसा सहनशीलता इत्यादि को एक अनुपात के अंदर महत्व देते हुए हर परिस्थिति के अनुसार

[10] यजुर्वेद २२.२२

मनुष्य को निर्णय लेने का उपदेश दिया है। इसी को महाराज मनु ने मनुष्य को मननशील कहा है महर्षि दयानन्द इन्हीं बातों को अपने उपदेश एवं लेखों में स्पष्ट करते हैं इस प्रकार महर्षि दयानन्द के शब्दों में वेदों में वर्णित राष्ट्रीय शान्ति की चर्चा की गई है तथा आगे हम सामाजिक शान्ति या व्यक्तिगत शान्ति की चर्चा करेंगे।

सामाजिक व्यक्तिगत शान्ति-

जब सामाजिक शान्ति की बात आती है उस समय हमारा ध्यान शान्ति को भंग करने वाले साधनो पर जाता है। उनमें सबसे प्रमुख क्रोध है और क्रोध के समान कोई आग नहीं है ऋग्वेद के अंदर कहा है-

परा हि मे विमन्यव: पतन्ति वस्य इष्टये। वयो न वसतीरुप॥[11]

वेद मंत्र में यह कामना की गई है कि जैसे पक्षी अपने घोंसलों से उड़कर दूर चले जाते हैं वैसे ही क्रोधी व्यक्ति हमसे दूर चले जाएं। वेद में इस मंत्र में क्रोधी व्यक्तियों से दूर रहने की बात कही है ऐसा होने से धन की उपलब्धि होगी। धन से अभिप्राय अर्थ और यश दोनों की प्राप्ति से है। क्रोध का दुर्गुण न आने पाए मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह जैसे व्यक्तियों के पास बैठता है वैसी ही शिक्षा ग्रहण करता है। वेद में कहा गया है कि क्रोध करने वाले दुष्ट जन मुझसे दूर चले जाएं क्रोधी जनों के दूर रहने से मनुष्य क्रोध की प्रवृत्ति नहीं बढ़ेगी इसलिए यह प्रार्थना की गई है। इस प्रकार क्रोध शान्ति को नष्ट करता है गीता में कहा है-

क्रोधात्भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः।
स्मितिभ्रंशात् बुध्दिनाशः बुध्दिनाशात् प्रणश्यति॥[12]

क्रोध से समोह, समोह से विभ्रम, विभ्रम से बुद्धि नाश और बुद्धि नष्ट होने से प्राणी स्वयं नष्ट हो जाता है। क्रोध मूढता से आरंभ होता है और पश्चाताप पर इसकी समाप्ति होती है। जब मनुष्य मूर्खता के कारण उल्टा सीधा आचरण कर बैठता है तो फिर पश्चाताप करना पडता है। इससे द्वेष, घृणा, दुख और अभिमान उत्पन्न होते हैं इसलिए इसे शान्ति का नाशक माना गया है। क्रोध के द्वारा व्यक्ति की मानसिक, सामाजिक और राष्ट्रीय शान्ति भंग होती है।

निष्कर्ष-

वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः।
अधमं गमया तमो यो अस्माँ अभिदासति।।[13]

[11] ऋग्वेद १.२५.४

[12] श्रीमद् भगवद्गीता

[13] अथर्ववेद १.२१.२

हे राजन्! (इन्द्र) हमारे शत्रुओं को मार डाल। सेना लेकर हमारे ऊपर आक्रमण करने वालों को नीचे दबा दे। जो हमें दास बनाना चाहता है अथवा नष्ट करना चाहता है उस अधम पुरुष को मृत्यु का ग्रास बना दे। इस मंत्र में परमात्मा ने शासक को आदेश दिया है कि वह शत्रुओं को मार डाले। सेना लेकर चढ़ने वालों को रोक दें और हानि पहुंचाने वालों को अन्धकार में पहुंचा दें। प्रश्न यह उठता है कि जब परमात्मा धरती के सब वासियों का पिता है और हम सब उसकी संतान है तो फिर शत्रुओं को मार डालने और नीचे अंधकार में पहुंचाने की बात क्यों कही गई है। एक देश/राज्य विस्तार की लिप्सा से भौतिक लाभ के वशीभूत होकर भौतिक सुविधाओं के अभाव में अथवा सांप्रदायिकता के प्रसार के लिए किसी दूसरे देश पर आक्रमण कर देता है तो उसकी प्रतिक्रिया के रूप में दूसरे देश के शासक को शत्रुओं को मारने का उद्योग करना पड़ता है। वेद में ईश्वर को पिता, धरती को माता और धरती के सारे मनुष्य को एक परिवार मानकर सबको प्रेम पूर्वक रहने की प्रेरणा दी गई है। वेद में वसुधैव कुटुंबकम् का उपदेश है परस्पर अहिंसा पूर्वक रहने की प्रेरणा दी है। हम मन से किसी का अनिष्ट चिन्तन न करें, वाणी से किसी को दुख न दें और शरीर से किसी को कष्ट ना दें अर्थात् मनसा वाचा कर्मणा का उपदेश किया है। मन से किसी का अहित चिन्तन न करना, वाणी से किसी को दुख ना देना और शरीर से किसी को पीड़ा न पहुंचाना ऐसी वेद ने मनुष्य समाज को प्रेम पूर्वक रहने की प्रेरणा दी है। कुछ परिस्थितियों में हिंसा का विधान भी किया है यह तीन परिस्थितियां हैं- बाहरी आक्रमण, असामाजिक तत्वों का दमन और भयंकर विषैले जंतुओं का नाश। वेद में प्रेम पूर्वक रहने का उपदेश दिया गया है परंतु दुष्टों को दंड देने का विधान भी साथ-साथ किया गया है। इसके बिना शान्ति स्थापित करना सम्भव नहीं है।

पुष्पिका

- अथर्ववेदसंहिता, पं. जयदेव शर्मा, आर्य्य साहित्य मंण्डल, अजमेर, राजस्थान १९८५
- मनुस्मृति, पं. तुलसीराम स्वामी, स्वामी प्रेस, मेरठ, २००५
- श्रीमद्भगवद्गीता : शाङ्करभाष्य, गीताप्रेस, गोरखपुर, २०१५
- सांख्य दर्शन, हिन्दीटीका, पं. श्रीराम शर्मा आचार्य:, संस्कृति संस्थान प्रकाशन, वेद नगर बरेली,२०००
- सांख्यकारिका, राकेश शास्त्री, संस्कृत ग्रन्थागार, ४६ संस्कृत नगर दिल्ली, २००४
- सत्यार्थ प्रकाश, महर्षि दयानन्द सरस्वती, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली २०१४
- ऋग्वेद संहिता, भाष्यकार : पं. जयदेव शर्मा, आर्य्य साहित्य मण्डल, अजमेर, राजस्थान २०१४
- यजुर्वेद भाष्यम्, भाष्यकार : महर्षि दयानन्द सरस्वती, आर्य्य साहित्य मण्डल, अजमेर, राजस्थान २०१४
- आर्याभिविनय, महर्षि दयानन्द सरस्वती, आर्य्य साहित्य मण्डल, अजमेर, राजस्थान २०१४
- वैदिक नित्यकर्म एवं पञ्चमहायज्ञ विधि, आचार्य सत्यानन्द नैष्ठिक, सत्यधर्म प्रकाशन, रोहतक, हरयाणा २००९
- वैदिक जीवन, विश्वनाथ वेदालङ्कार, रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत, हरयाणा १९८५
- वेद सन्देश, प्रो. रामविचार, विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली १९९९
- उपदेश मञ्जरी (पूना में दिये गये व्याख्यान), सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली १९९३
- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, महर्षि दयानन्द सरस्वती, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली २०००

.....